वीभत्स

पांडेय बेचन शर्मा

वीभत्स

शौच-फरागत से निपटकर सुमेरा जाट घर की ओर लौटा आ रहा था। अब सबेरा और खुल गया था। पास-पड़ोस के लोग आलस्य त्याग, शीघ्रता से, दिन के अपने-अपने

https://www.hindiadda.com/vibhats/

आरंभिक कर्मों से फुर्सत पाने की चेष्टा कर रहे थे। कोई बैलगाड़ी के पहियों की जाँच कर उनमें तेल डाल रहा था, कोई बैलों के कलेवा के लिए घर के भीतर से खाँचों में भूसा बाहर कर रहा था। औरतें बड़े-बड़े घनघोर घाँघरे लहराती हुई, घड़े दबाए या माथे पर टेढ़ा उठाए, कुएँ की ओर जा रही थीं। किसी-किसी जाट के दरवाजे पर मलिना, दरिद्रा, कुरूपा जाट-महिलाएँ असभ्यता से लहँगे सँभाले, सीधी बैठी हुई, प्रायः मर्दानी अकड़ से पिछली रात के जूठे बरतन मल रही थीं।

सुमेरा ने देखा, उसका द्वादस-वर्षी लड़का शमशेरा उसके दरवाजे पर खड़ा अपनी माँ से कुछ उत्तेजना-पूर्ण बातें कर रहा था। लड़के की नजर भी आते हुए सुमेरा पर पड़ी। वह टूटकर दौड़ा, और चार ही छलाँग में सुमेरा के सामने आश्चर्य-विमुग्ध-सा आ खड़ा हुआा वह हाँफ रहा था।

'क्या है शमशेरा?'

'बाबा गजब है!'

'क्या गजब है?'

'हमारी लैला को न-जाने क्या हो गया।'

'कहाँ है वह?'

'है तो वहीं, उसी ओसारी में; मगर बेहोश-सी पड़ी हैा'

'सोई होगी रे!'

'अरे, नहीं बाबा! वह इस तरह बेहोश कब सोती हैा मैं गया, माँ गई; हमने उसे पुकारा, हिलाया-डुलाया भी; लेकिन वह तो जरा सगबगाती भी नहीं।'

'भला, चल जरा। मैं भी तो देखूँ।'

दरवाजे पर पहुँचकर सुमेरा ने देखा, उसकी पत्नी उदास खड़ी थी। आँखों में आँसू थे उसकी।

'क्या हुआ री लैला को?'

'ओह!' वह बोली - 'चलकर देखो न, वह मर गई है'

'धत्! मरे उसका दुश्मन। पगली कहीं की। सुबह-सुबह नुकसान ही की बात सोचती है। चल तो।'

पति, पत्नी और पुत्र लपककर उस ओसारी में पहुँचे, जहाँ लैला रहती थी। सुमेरा की तीव्र दृष्टि ने देखा, सचमुच लैला बेहोश पड़ी थी। उसका पेट कुछ अस्वाभाविक फूला था, बड़ी-बड़ी कजरारी आँखें अपलक और निस्तेज-सी दिखाई पड़ती थीं। निकट जाकर सुमेरा ने आवाज दी - लैला! ओ लैला! मगर लैला ज्यों-की-त्यों रही।

'वह मर गई।' सुमेरा की पत्नी ने उदासी से कहा।

'अब वह कभी न बोलेगी बाबा? हाय! अब मुझे दूध कौन पिलाएगा?' शमशेरा रुआँसा हो गया।

सुमेरा की पत्नी ने देखा, वह बड़े ध्यान से लैला की फूली काया की ओर देख रहा था। जैसे कुछ सोच रहा था। उसने कहा - 'डोक्कर (चमार) को बुला दो, इसे उठा ले जाय। चमड़ा इसका साफ कर लौटा जाएगा। या दो जोड़े जूते बनवा लेना। एक अपने लिए, एक शमशेरा के लिए।'

सुमेरा चुप रहा, सोचता रहा।

'और तेरे लिए एक 'लतरी' (देहाती चप्पल) भी इसमें से निकल सकेगी अम्मा! काफी चमड़ा निकलेगा।' शमशेरा ने अपनी माँ से कहा। फिर सुमेरा की ओर देखकर बोला - 'मैं मोहना चमार को बुला लाऊँ बाबा?'

'नहीं रे!' गंभीर स्वर में सुमेरा बोला - 'ऐसी बढ़िया, हट्टी-कट्टी बकरी भला मैं चमार को खाने के लिए दूँगा?'

'तब क्या करोगे?' पत्नी ने खीझ-भरे स्वर में पूछा।

'क्यों?' हमीं सब इसको खाएँगे। हुआ क्या?'

'ओरी माँ?' घबराई उसकी पत्नी - 'मरी बकरी खाओगे! ऐसा भला कोई करता है?'

'तो क्या मैं मुफ्त ही में उसे दे दूँगा? न, न, यह मुझसे नहीं होने का। अरे शमशेरा! जरा छुरा तो ला; मैं अभी इसे साफ किए देता हूँ। इसे खाने में कोई भी हर्ज नहीं। जिसे मोहना खा सकता है, उसे हम क्यों नहीं खा सकते?'

'ना रे,' शमशेरा की माँ ने लड़के को छुरा लाने से मना किया - 'छुरा-बुरा न लाना। हम भला मरी बकरी खाएँगे।' पति को ताककर बोली - 'अजीब सूम-सट्ट आदमी हो।'

'मैं तो खाऊँगा।'

'खाना तो दूर, मैं तो पका भी नहीं सकती। क्यों शमशेरा! तू खाएगा बेटा?'

'न माँ!' लड़का बोला - 'मरी लैला को खाने में मुझे घिन लगेगी, मितली छुटेगी, कै कर दूँगा।'

'जा, छुरा ला, छुरा।' सुमेरा इस बार बिगड़ा - 'कोई न खाय, मैं अकेला खाऊँगा। यह न पकाएगी बला से; जरा नमक भी लेता आ बस, मेरा काम हो जाएगा।'

शमशेरा अपने बाप का तीखा मिजाज खूब जानता था। वह समझ गया कि अब छुरा लाने में जरा भी देर करने से उसका पिता उसकी खोपड़ी को चपतगाह बनाए बिना न रहेगा। वह दौड़ा।

छुरा आया। सुमेरा लैला 'दि बकरी' के सामने वीरासन बैठ गया। उसने उसे चित्त कर दिया, और गर्दन से दुम तक छुरे से एक गहरी रेखा खींच दी। देखते-देखते लैला के पेट की सारी माया बाहर झाँकने लगी। जमे हुए रक्त की हलकी लाली लिए उसके पेट का मल-रस ओसारी की जमीन में फैल गया। अंतड़ियों के गुच्छों को सुमेरा इस आसानी से उसके पेट से बाहर कर रहा था, जैसे कोई खरबूजे के बीजों को बाहर करे। मांस के दबीज टुकड़ों को छुरे की सहायता से वह ऐसे निकालने लगा, जैसे कोई कटहल से कोए बाहर करे। एक रक्त-श्याम खंड को निकालकर, मुँह में डालकर कच्-कच् खाते हुए वह बोला - 'कौन कहता है कि मरी बकरी का गोश्त खराब हो जाता है। बिल्कुल ठीक है। बड़ा जायकेदार है। जरा चखकर देख।' पत्नी की ओर टुकड़ा उसने बढ़ाया।

'न बाबा।' वह भागी घर की ओर - 'धन्य है तुम्हारा जी, जो मरी लैला को कच्-कच् खाए जा रहे हो। मुझे तो मतली छूटती है।'

अपना मैला दुपट्टा फैलाकर सुमेरा ने कोई पाँच सेर साफ गोश्त उसमें इकट्ठा किया। अँतड़ियों और झिल्लियों को जमीन पर एक ओर चुन दिया, और फिर स्वयं कच्चा ही मांस खाने लगा। इस सरलता से, जैसे फलाहारी फलाहार पाए।

स्वयं खा चुकने पर चमड़े को उसने आँगन में सूखने के लिए जरा नमक लगाकर डाल दिया, और दुपट्टे के गोश्त की गठरी कर ली। अब वह अँतड़ियों और गंदे हिस्से को जमीन से समेटने लगा।

'दुपट्टेवाला गोश्त क्या होगा बाबा? और इन अँतड़ियों को क्या करोगे?'

अँतड़ियाँ बैलों की सानी में डालूँगा। वे बड़े चाव से चखेंगे। बाकी गोश्त अनूपशहर में किसी झटकेवाले के हाथ बेच दूँगा। पाँच सेर से कम न होगा। कुछ भी नहीं, तो दो रुपये मिलेंगे। तेरी माँ तो निरी उल्लू है, शमशेरा! भला मैं मोहना चमार को अपनी बकरी क्यों देता? मैंने अपना पेट भरा - अब आज कुछ खाना थोड़े ही खाऊँगा - बैलों का इंतजाम किया, और अब दो रुपये भी बनाऊँगा। मैं मोहना को क्यों देता। क्या मैं इतना बड़ा बेवकूफ हूँ।'

शमशेरा आश्चर्य-विमुग्ध भाव से अपने पिता का भयानक मुँह देखता रहा। उसकी दाढ़ी पर कच्चे मांस का लाल रस यत्र-तत्र जमा दिखाई पड़ता था, और कहीं-कहीं चर्बी के सफेद टुकड़े भी।

बात यों है। सुमेरा जाट अपने गाँव-भर में अपवाद-सा प्राणी था। उसके-से स्वभाव और आचार-विचार का एक भी और जाट उस गाँव में नहीं था। रुपये के लोभी और भी अनेक थे - उस दो सौ व्यक्तियों की क्षुद्र बस्ती में, मगर सुमेरा जाट का लोभ असाधारण था, अमानुषिक था। रुपये कमाने और बचाने के नाम पर वह कुछ भी कर सकता था। गाँव वालों का तो यहाँ तक विश्वास था कि उसने कहीं-न-कहीं हजारों रुपयों की गिन्नियाँ गाड़ रक्खी हैं। कैसे? कहाँ से कमा या पाकर? इसका उत्तर यदा-कदा आपस में कानाफूसी करते हुए उसके पड़ोसी बंधु इस तरह दिया करते - सन् 1916 में, उसने 6 और साथियों को जोड़कर, अनूपशहर में एक जाट महाजन के घर पर, दीवाली वाली अमावस्या की अँधेरी रात में, छापा मार, सेंध काटकर चोरी की थी। सातों साथियों ने उस धनिक के पक्के मकान में तीन-तीन सेंधें काटी थीं।

उस चोरी की घटना के कारण तो उसे गाँव के दूसरे गरीबों ने टाट-बाहर या जाति-च्युत भी कर दिया था। क्योंकि, पाँव के निशान के सहारे, जब पुलिस ने सातों चोरों में से सुमेरा के साथ-साथ चार को गिरफ्तार कर लिया, तब वह बंधु-द्रोही और विश्वासघातक सरकारी क्षमा का सहारा लेकर 'मुखबिर' बन गया था। मुखबिर बनकर उसने ऐसी शांत और गंभीरता से अपना बयान गढ़ सुनाया कि थानेदार से लेकर मुख्तार तक दंग रह गए। उसने पहले पुलिस को और फिर अदालत को बताया - 'सरकार, मैं गरीब और सीधा गाड़ीवान हूँ। मुझे इन्होंने मुफ्त ही में इस चोरी में फँसा

मारा। इन्होंने लालच दिया - व्यर्थ ही गाड़ीवानी में जिंदगी खराब करने से फायदा? अरे चलकर एक रकम ऐसी क्यों नहीं मारते कि जिंदगी आराम से कट जाय। न कुछ तकलीफ, न मेहनत। बस, जरा-सी हिम्मत की जरूरत है।'

अदालत के यह पूछने पर - 'सुमेरा, तुम भी घर में घुसे थे?' सुमेरा ने जवाब दिया - 'नहीं हुजूर! ये तो मुझे भीतर घुसने ही का काम देते थे, मगर पहला-पहला वाकया होने से मेरी छाती धुकपुक कर रही थी। मेरी हिम्मत के हाथ-पाँव ठंडे पड़े जा रहे थे। मगर माल बहुत लाना था, और इनके पास आदमी कम थे, इसी से ये मुझे ले गए। मेरा काम था मकान के बाहर खड़े रहकर बाहर की आवश्यक गतिविधि की भीतरवालों को सूचना देना। किस तरह, सो भी कहूँगा - दोहाई गरीब परवर की! जरा भी झूठ बोलूँ, तो मेरी देह सड़ जाय। मुझे काम मिला था, गली की निगरानी करना, और मेंढक की बोली बोल-बोलकर कुशल की सूचना देते रहना। यही हमारा इशारा था कि मेरी आवाज रुके, और भीतरवाले साथी तुरंत समझ भाग खड़े हों। मगर रात अँधेरी थी, गली अकेली और चुप। हमने पूर्ण शांति से चोरी की। तीन संदूक गहने और एक संदूक गिन्नियाँ। इतना सामान ढोकर निश्चित स्थान पर लाते-लाते हम लस्त-पस्त हो गए। मगर दोहाई गरीब परवर की। उस वक्त इन सबों ने मुझे अँगूठा दिखा दिया। वह, जो सरदार था हमारा, बड़ा बेईमान निकला। सब माल अपनी कोठरी में इकट्ठा कर बोला - अब सबेरा होने वाला है। सुमेरा, इस वक्त बाँट-बखरा करने से सोने-चाँदी की आवाज मुहल्लेवालों के कानों में पड़कर भंडाफोड़ कर सकती है। रात में बाँटा जाएगा। मगर कौन बाँटता है हुजूर! इन पाजियों ने आपस ही में सारी रकम तक्सीम कर ली। सरदार ने केवल दस रुपये मेरे हाथ पर धर दिए। बोला - 'गाड़ीवानी करके इतने रुपये तुम दस दिन में भी न जुटा सकते। एक दिन की मजूरी यह बहुत। अबकि हमारे साथ 'कमाने' चलोगे, तब इसका दूना हिस्सा मिलेगा। चोरी कानून का यही नियम है।'

इस तरह मुखबिर सुमेरा तो साफ-साफ बच गया, और अन्य छहों को डेढ़-डेढ़, दो-दो साल की सख्त सजा हो गई। सुमेरा के इस कांड से उसके गाँव के गरीब, मन-ही-मन, बहुत ही असंतुष्ट हुए। उनका यह विश्वास बराबर बना रहा कि उस दुष्ट ने पहले तो एक जाट ही के घर चोरी की और फिर अपने अनेक साथियों से विश्वासघात किया। वे यह भी हमेशा मानते रहे कि माल के बँटवारे के बारे में सुमेरा का बयान सरासर गलत था। उसे उसका भाग मिला था, जिसे उसने जरूर कहीं गाड़ रक्खा है। अस्तु, और कुछ नहीं, तो चोरी के आचरण के विरोध में, गाँव के चंद चुने गरीब गाड़ीवान या ऊँटवान पंचों ने, उसे जाति-च्युत कर दिया।

मगर जिस रुपये के लिए सुमेरा ने चोरी और बेईमानी की, उसका उपभोग करते हुए कभी किसी ने नहीं देखा। वह हमेशा फटी हालत में रहा। हमेशा ही उसके घर पर एक बार - रात में - रोटियाँ पकतीं। कभी-कभी तो गाड़ीवानी में तीन रुपए रोज तक वह पैदा करता। 6 बजे जो बैलों के कंधे पर गाड़ी का जुआ रखता, तो 9 बजे रात ही में उतारता। और, यदि उस समय भी, अर्थाभाव से, शमशेरा की माँ रोटी न पकाए रहती, तो वह रुपये न तुड़ाता। कहता - 'रात के सात-आठ घंटे बचे हैं। आओ, आज यों ही काट लें। अब कल अनूपशहर से लौटते वक्त आटा-दाल लाऊँगा, तो पकाना। एक रात में कुछ मर तो जाएँगे नहीं।' इस पर शमशेरा की माँ कुछ हाँ-ना करती, सुमेरा को डिगाकर पैसे लेना चाहती, तो गाली-गलौज, हाथा-बाहीं और रो-गा की नौबत आ जाती, पर सुमेरा रात में रोटी कभी न पकाने देता। थके बैलों को उस दिन सानी भी न देता। छोड़ जरूर देता, गाँव की गलियों में घूम-घूमकर स्वावलंबन का सबक सीखने के लिए।

सुमेरा की एक और आदत ऐसी थी, जिससे गाँववाले बहुत चिढ़ते, मगर जाति-च्युत होने की वजह से वह उनकी रीझ-खीझ से एक तरह से निर्द्वंद्व हो गया था। लोग कोने-अंतरे बकते ही रहते, और वह अपने मन की करता ही रहता। सुमेरा गाँव के चारे और खेत-खलिहान के भूले-भटके दानों पर बसर करनेवाले कबूतरों को बड़ी निर्दयता से पकड़ता था। वह गोश्त खाने का बहुत ही शौकीन, किंतु खर्च न करने का प्रेमी था। गाँव में जंगली कबूतर सैकड़ों से ऊपर थे। बस, हफ्ते में दो-बार उन्हीं के माथे वह अपना मांस-प्रेम निबाहता था। मुट्टी-भर भुने या कच्चे चने या कोई मोटा नाज लेकर वह कबूतरों को कभी यहाँ, कभी वहाँ आकर्षित करता, और जब वे नादान दाने चुगने लगते, तब सुमेरा ऐसा झपट्टा मारता कि दो से कम कभी न पकड़ता। इस तरह अधेले के खर्च में ताजे पक्षी का गोश्त उसे मिल जाता। उसकी इस हरकत के खिलाफ गाँव का एक बच्चा भी कुछ बोलता, तो बिना उसके कान गरम किए वह न मानता। बात बढ़ती, तो बहुतों से युद्ध करने को तैयार हो जाता। गरीब बेचारे फौजदारी और पुलिस की हैरानियों से डरकर चुपकर रह जाते। इतना सूम होने पर भी सुमेरा बली काफी था। कोई-कोई उसके कुल गुणों की महिमा मानकर उसे सूने-बे-सूने दैत्य कहा करते। था भी सात फीट दो इंच लंबा, काला, रूखा और परम भयानक।

सन् 17 की बात है। देश के अधिकांश भागों में युद्ध-ज्वर या इंफ्ल्युएंजा का नाशकारी आतंक छाया हुआ था। एक-एक शहर में रोज शत-शत प्राणी मर रहे थे। एक-एक गाँव में अनेक-अनेक। अनूपशहर और उसके आस-पास के हाट-बाजारों में कुहराम-सा छाया था। खास सुमेरा के गाँव के सभी प्राणी त्रस्त थे। मारे डर के कोई बाजार नहीं

जाता था, क्योंकि लोगों ने सुन रखा था कि वह रोग छूत से भी फैलता है। मगर सुमेरा प्रसन्न था। क्योंकि आजकल उसके माथे पर कोई विशेष खर्चा नहीं था। बीमारी फैलते ही, एक बहाने से, उसने अपनी बीबी और शमशेरा को ससुराल भेज दिया था। अब उसे कोई फिक्र न थी। वह रुपयों के खर्च होने से जितना दहलता था, उतना न तो इंफ्ल्युएंजा के कोप से और न रोज-रोज सैकड़ों अपने ही-से आदमियों के लोप से। हाँ, बीमारी के कारण बैलगाड़ी का रोजगार कुछ मंदा पड़ गया था, इसका उसे दु:ख था।

सुबह आठ-साढ़े आठ का वक्त था। आज जरा देर से बैलगाड़ी जोतकर सुमेरा अनूपशहर की ओर जा रहा था। वह गाँव के बाहर ही हुआ था कि दो व्यक्ति दिखाई पड़े। सुमेरा ने, यों ही, उनसे पूछा - 'कहाँ से आए? इस गाँव के तो नहीं लगते।'

'हम हाट से आए थे, मगर काम नहीं हुआ।'

'क्या काम?'

'बैलगाड़ी की जरूरत थी।'

'क्यों?'

'हाट के चार-पाँच प्राणी दो दिनों से मरे पड़े हैं। उन्हें कोई फेकनेवाला नहीं। उन्हीं मुर्दों को गंगाजी में बहाने के लिए किसी गाड़ीवान को ठीक करने आए थे।'

'मुर्दों के लिए गाड़ीवान!' सुमेरा आश्चर्य से हँसा - क्या उनके घर के सभी मर गए हैं?'

'नहीं जी, मरे नहीं।' दूसरे व्यक्ति ने उत्तर दिया - 'मगर मुर्दों को उठाकर घाट तक ले जाने में मरने का पूरा खतरा है। पिछले हफ्ते दस आदमी इसी तरह मर गए। जिसने भी इस रोग के मुर्दे को कंधा दिया, वह बचा नहीं। मसान से लौटते ही सबकी देह में दर्द-भयानक, बुखार आफत का!'

इसी से लोग डर गए हैं, है न?' गंभीरता से सुमेरा ने पूछा।

'डर? डर की तो यह हालत है कि बाप बेटे को मसान ले जाने को तैयार नहीं। जान किसे प्यारी नहीं होती? जो मरा, सो मरा; अब जो बचे हैं, वे क्यों जान दें?'

'और बैलगाड़ीवाला नहीं मर जाएगा?'

'अहँ! क्या समझ है, इस गाँव के गाड़ीवानों की। अरे भाई, बैलगाड़ी वाले को क्या कंधा देना होगा - अर्थी उठानी होगी? बैल पर लादा, गंगाजी में जा बहाया।'

'गाँववालों ने क्या कहा?'

'कोई तैयार नहीं, बल्कि जिससे पूछा, वही लड़ने पर अमादा हो गया।'

'क्या मजूरी मिलेगी?' व्यापारिक उत्सुकता से सुमेरा ने दरियाफ्त किया।

'एक रुपया फी मुर्दा। पाँच हैं। गंगाजी हमारे हाट से पाँच कोस पर पड़ती है। चलोगे?'

'मैं तो अनूपशहर जाता हूँ। मजूरी तो बहुत कम है, काम बड़े खतरे का।'

'चलो, तो चलो, चार आने और ले लेना।'

बैलों को एक चाबुक मार तेज बढ़ाते हुए सुमेरा ने कहा - काम खतरे का है, दो रुपया मुर्दा मिले, तो चलूँ।'

मगर उन दोनों गरजमंदों को यह विश्वास नहीं हुआ कि जिस गाँव के सभी बैलवालों ने मुर्दे ढोने से इनकार कर दिया है, उनका कोई आदमी उस काम को स्वीकार करेगा! उन्होंने सुमेरा के निश्चय की दृढ़ता जानने के लिए पुनः प्रश्न किया - चलोगे भी कि महज बातें ही...?'

दृढ़ता से सुमेरा ने कहा - 'दो रुपए की मुर्दा देना हो, तो आओ, बैठ जाओ गाड़ी पर - पाँच हैं न? मैं फेक दूँगा।'

मजदूरी के दस रुपये लेकर मुर्दों का पहला खेप निर्भय भाव से सुमेरा ने उस हाट से लादकर गंगाजी में जा बहाया। रास्ते-भर एक दिन की इतनी अधिक मजूरी की खुशी के कारण उसकी नजर न तो मुर्दों की बीभत्सता पर पड़ी, और न ही वह डरा या घबराया ही। हाट के लोग उसके इस जीवट पर दंग रह गए। साथ ही उन्हें एक गाड़ीवान के मिल जाने से मुर्दों की ओर से कुछ निश्चिंतता भी हो गई। उन्होंने लौटानी पुनः सुमेरा को बुलाया; क्योंकि उसके जाते-जाते तीन व्यक्ति और मर चुके थे। उन्हें भी तो बहाना था।

सुमेरा के सौभाग्य से समझिए या दुर्भाग्य से, जिस दिन से उसने हाटवालों के मुर्दे बहाना शुरू किया, उसी दिन से गाहीं के गाही आदमी मरने लगे। सात दिनों तक बराबर मुर्दे फेकने के बाद कमर की थैली निकालकर सुमेरा ने जो रुपये गिने, तो पूरे

पच्चहत्तर निकले। पच्चहत्तर इसलिए कि एक दस वर्ष की लड़की की लाश को उसने आधे ही रेट में फेक दिया था। अब वह मन-ही-मन यह सोच रहा था कि यदि पचीस रुपये की मजूरी-भर को और मुर्दे मिलते तो पूरे सौ की कमाई-महज आठ दिनों में होती। सौ रुपये! आठ दिनों में! लोभी सुमेरा की कल्पना इस विचार मात्र से नाच उठी।

सचमुच आठवें दिन सुमेरा की गाड़ी पर गंगा-यात्रा करने के लिए उत्सुक ग्यारह मुर्दे तैयार मिले। वह बहुत ही प्रसन्न हुआ। यद्यपि गाड़ी पर आठ मुर्दों से अधिक के लिए स्थान नहीं था, फिर भी उसने ग्यारहों को लाद लिया। कुछ को लंबे-लंबे रखा, तीन को आगे बेड़े-बेड़े और दो को पीछे तर पर रख रस्सी से बाँध दिया। मजूरी के बाईस रुपये लेकर टेंट में सँभाले, और एक रूखा, ग्रामीण गाना गाता, बैलों की पीठ पर चाबुक से ताल देता हुआ गंगा-तट श्मशान की ओर चल पड़ा। मन-ही-मन सोचता जा रहा था, एक दिन और मजदूरी करने से उसकी थैली में सौ से ऊपर हो जाएँगे।

गंगा तट पर पहुँचकर उसका यह नियम होता कि वह मुर्दों को गिन-गिनकर, कमर-भर पानी में हलकर बहा देता। मगर इस बार उसने जो मुर्दों को गिना, तो आश्चर्य! वे ग्यारह की जगह दस ही निकले। दस ही क्यों? सुमेरा जरा विचलित हुआ। मजदूरी तो ग्यारह की मिली है। गिन-गिनकर उतने ही मुर्दे उसने लादे भी थे, फिर यहाँ आकर इस बार एक कम कैसे हो गया? एक भाग गया क्या? भाग गया! सुमेरा इस बार जरा सिहर उठा। मुर्दा भाग गया - हाँ, उसने सुना था कभी कि प्रेत-बाधित मुर्दे भाग भी जाते हैं। तो क्या उन ग्यारह में कोई शैतान मुर्दा भी था? या केवल भ्रम है, उसने दस ही मुर्दे लादे हैं?

टेंट से रुपए निकालकर उस सुनसान श्मशान में, गोधूली बेला में, सुमेरा रुपये गिनने लगा। दो-दो कर ग्यारह जोड़े। रुपए थे बाईस! फिर एक मुर्दा कहाँ गया?

उसने सोचा, हो-न-हो, पीछे से कहीं रास्ते में गिर गया हो। इसलिए गाड़ी पर के मुर्दों को गंगा प्रवाह कर पिछड़े मुर्दे को खोज लाकर बहाने का निश्चय किया। वह एक-एक को उतारकर बहाने लगाद्य थोड़ी देर में गाड़ी खाली हो गई। गोधूली भी अधिक काली हो गई। गंगा की ओर नजर कर उसने देखा, मुर्दे लहरों से खेलते उलटे-सीधे बहे चले जा रहे थे। वह इस बार धारा में किनारे से उन्हें गिनने लगा। एक बार इनकी संख्या भ्रम-वश उसे ग्यारह मालूम पड़ी। ग्यारह! एक ही साँस में वह दहल भी उठा, मुस्करा भी पड़ा। फिर गिनने लगा, और फिर - मगर मुर्दे अंत में दस ही ठहरे।

आखिर एक गया कहाँ? यही सोचता हुआ सुमेरा हाट की ओर लौटा। रास्ते में अंधकार होने पर भी वह सावधानी से भूले मुर्दे को ढूँढ़ता जा रहा था, मगर सड़क पर मीलों तक कहीं कुछ पता न चला।

वह क्या! सुमेरा ने देखा, दूर पर एक बरगद के पेड़ के नीचे आग जल रही थी -और - और कोई नंग-धड़ंग, रूखा, दढ़ियल शैतान-सा प्राणी अग्नि के प्रकाश के पास खड़ा नाच रहा था। उसके हाथ में साधुओं का चिमटा था, और उसके पाँव के नीचे - ऐं! सुमेरा दहल उठा। उस भयानक साधु के नीचे कोई मुर्दे-सा पड़ा था, जिसके पेट में रह-रहकर वह अपना चिमटा घुसेड़ देता, और नाचने लगता। सुमेरा ने यह भी देखा कि कभी-कभी चिमटे से मुर्दे का मांस निकालकर आग पर सेंक-सेंककर वह राक्षस खा भी रहा था। मुर्दा खा रहा है! सुमेरा की आत्मा थरथर-थरथर होने लगी। सप-से एक चाबुक मार उसने बैलों को जोर से आगे बढ़ाया। उसे निश्चय हो गया कि वह व्यक्ति साधु नहीं, मनुष्य नहीं, शैतान है।

अब की सुमेरा हाट की ओर नहीं गया। वह सपासप चाबुक मारकर बैलों को जोरों से हाँकता अपने गाँव और घर की ओर भागा। आठ दिनों से रुपए के लोभ से वह घर नहीं लौटा था, बराबर हाट ही में कुछ खा-पीकर सो जाता, और दिन में मुर्दे फेकता। मगर आज की लीला से उस 'दैत्य' का दिल दहल उठा। उसके छक्के छूट गए। उसने कभी आदमी को मुर्दा खाते नहीं देखा था। सुना था जरूर कि एक तरह के अघोरी ऐसे होते हैं, जो श्मशान में मुर्दा खाते हैं, मगर ऐसी बातों पर उसे विश्वास नहीं था। लेकिन इस आँखों-देखी घटना पर वह कैसे अविश्वास करता।

घर आकर, बैलों को खोल और बाँधकर, सलाई जलाकर वह मिट्टि का चिराग ढूँढ़ने लगा। पर यह क्या! उसने देखा उसके खाट पर जैसे कोई मुर्दा पड़ा था, मुँह विकृत, दाँत निकले। आ...ह! भय से उसके मुँह से निकला, और जलती सलाई हाथ से गिरकर पाँव पर पड़ी। पंजे पर जलने का अनुभव हुआ। घर में घोर अंधकार छा गया, और उस अंधकार में जैसे बरगद के पेड़ के नीचे का नजारा स्पष्ट रूप से नाचने लगा। सुमेरा को काठ मार गया। उससे बाहर भागा तक न गया। कुछ देर तक आँखें बंद किए जहाँ-का-कहाँ खड़ा वह काँपता रहा। देह से पसीने का परनाला बह चला।

दूसरी बार पुनः हिम्मत कर, खाँस-खाँसकर उसने सलाई जलाई। अब उसे मालूम हुआ कि असल में खाट पर कुछ भी नहीं था, सब भ्रम-मात्र था। अब कहीं उसकी जान में जान आई। मगर छाती उसकी धड़कती रही। पसीना पोछने के लिए माथे पर जो हाथ

ले गया, तो मालूम पड़ा, माथा तवे-सा जल रहा था। उसे निश्चय हो गया, बुखार हो आया था।

वह चुपचाप खाट पर जाकर लेट गया, और लेटे-लेटे कमर से थैली निकालने की कोशिश करने लगा। मगर उफ्! कमर में तो भयानक दर्द हो रहा था। कमर में दर्द, बुखार तो क्या, वह बीमार हो गया? सुमेरा सोचने लगा।

फिर उसका ध्यान गंगा-तट की ओर गया। दस मुर्दे - एक गायब। लौटते वक्त बरगद के नीचे आग - वह - वह राक्षस, मुर्दाखोर! आ...ह! वह मुर्दा खा रहा था - मुर्दा।

पहले कमर से उस दिन की मजदूरी के रुपये निकालकर उसने गिने - 2, 4, 6, 8, 20, 22। ग्यारह मुर्दा की मजूरी। मगर वे तो दस-दस ही थे। अहँ! रहे होंगे। मन मजबूत कर इस बार थैली निकाल, उसमें वे रुपए डाल, उसे बाँध पुनः कमर में लपेट लिया। थकावट अधिक मालूम पड़ने लगी। तमाम देह में उसकी पीड़ा उत्पन्न हो गई। वह एकाकी, पीड़ा और ज्वर से लिपटा, बिना बिस्तर की खाट पर इधर-से-उधर गरम करवटें लेने - प्रायः उछलने लगा।

उसे क्षण-भर बाद जरा-सी झपकी लगी। जरा ही-सी तो। और, उतने ही में उसने क्या-क्या सपना देखा। देखा, शमशेरा कह रहा है - 'बाबा, लैला मर गई।' देखा, वह लैला को काट रहा। उसकी स्त्री नाक सिकोड़कर मना कर रही है - 'हटो, मुर्दा खाओगे!' मगर वह खा रहा है। पर यह कौन है! - उसने देखा, ओसारी में वह तो लैला बकरी का मुर्दा खा रहा है, और आँगन मे वही बरगदवाला शैतान उसकी गाड़ी की ग्यारहवीं लाश चिमटे से कुरेद-कुरेदकर खिलखिलाता हुआ खा रहा है। आग जल रही है - वह भयानक नाच नाच रहा है।

सुमेरा मारे भय के ऐसे उछला कि खाट के नीचे धड़ाम से आ रहा। वह जोर से चिल्ला पड़ा - 'कौन मेरे आँगन में मुर्दा खा रहा था?' उसकी आँखें खुल गई। उफ्! कोठरी मे घोर अंधकार था। चिराग स्नेहाभाव से बुझ गया था। सुमेरा ने सुना, जैसे उसकी कोठरी में, पास ही, किसी के पैर की आवाज सुनाई पड़ रही है, मानो वही अघोरी नाच रहा है। साँस खींचने पर उसे ऐसा अनुभव हुआ, मानो तमाम कोठरी में जली लाश की बदबू भर गई है। मारे भय के वह खामोश हो गया।

तीन दिन बाद सुमेरा के घर से भयानक बदबू चारों ओर फैलने लगी। पास-पड़ोसियों का साँस लेना दुश्वार हो गया। लाचार उस दिन दो-एक पड़ोसियों ने पहले तो दरवाजे

पर से उसे पुकारा, मगर कोई उत्तर न पा वे घर में घुस गए। उफ्! भीतर तो नारकीय दुर्गंध का राज्य था!

क्षण-भर बाद कपड़े से नाक दबाए, पड़ोसियों ने कोठरी में सुमेरा की फूली और सड़ी लाश देखी। उसका पेट तो भयानक फूलकर विदीर्ण हो गया था, अँतड़ियाँ बाहर झाँक रही थीं। दाहिना हाथ उसका कमर और थैली पर था, जिसमें मुर्दों की ढोआई के पच्चहत्तर और बाईस - कुल सत्तानबे रुपये थे।